INTERNATIONAL JOURNAL OF HISTORY

E-ISSN: 2706-9117
P-ISSN: 2706-9109
www.historyjournal.net
IJH 2025; 7(8): 123-127
Received: 22-06-2025
Accepted: 22-07-2025

चंदन कुमार दुबे
शोध छात्र, सी.एम.पी. डिग्री कालेज, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत

भावना चौहान
प्रोफेसर, सी.एम.पी. डिग्री कालेज, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
चंदन कुमार दुबे
शोध छात्र, सी.एम.पी. डिग्री कालेज, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत

मेघदूतम् में वर्णित भौगोलिक प्रदेशों, पर्वतों, नदियों एवं नगरों की वर्तमान स्थिति एवं तादात्म्य

चंदन कुमार दुबे, भावना चौहान

प्रस्तावना

कालिदास संस्कृत साहित्य के क्षेत्र में अद्वितीय स्थान रखते हैं, जिन्हें महर्षि वाल्मीकि और वेदव्यास के बाद सर्वाधिक सम्मान और लोकप्रियता प्राप्त हुई है। उनकी प्रतिष्ठा न केवल भारतवर्ष में, बल्कि विश्व के अनेक देशों के साहित्यकारों के द्वारा भी स्वीकार की जाती है। उन्होंने भारतीय पौराणिक गाथाओं और दर्शन को अपनी रचनाओं का आधार बनाया, जिनमें भारतीय जीवन और दर्शन के विविध रूप और मूल तत्व दृष्टव्य हैं। उनकी कृतियाँ, विशेष रूप से मेघदूतम् उन्हें सरस्वती के श्री श्रृंगार और राष्ट्र के चेतनाप्रेरक के रूप में स्मरण कराती हैं।[1]

मेघदूतम् कालिदास की एक प्रौढ़ और परिष्कृत रचना है, जिसे एक 'खण्ड–काव्य' या गीतात्मक कविता के रूप में वर्गीकृत किया गया है। यह काव्य अपने आप में अद्वितीय है, जिसमें कवि की प्रौढ़ कल्पना, उदात्त भावना और परिष्कृत शैली का सामंजस्य दिखाई पड़ता है। यह मंदाक्रांता छंदों में रचित है, जिसमें प्रसाद और माधुर्य गुण तथा विप्रलंभ श्रृंगार रस की प्रधानता है। यह काव्य दो भागों में विभाजित हैः 'पूर्वमेघ' और 'उत्तरमेघ'। 'पूर्वमेघ' भौगोलिक विवरण के दृष्टिकोण से अत्यंत महत्वपूर्ण है, जो रामगिरि से लेकर अलकापुरी तक की मेघयात्रा का विस्तृत वर्णन करता है, जबकि 'उत्तरमेघ' अलकापुरी के सौंदर्य और यक्ष की प्रियतमा के बारे में विस्तार से उल्लेख करता है। इस काव्य की केंद्रीय अवधारणा एक शापित यक्ष के इर्द–गिर्द घूमती है, जिसे अपने स्वामी कुबेर के कोप का शिकार होकर एक वर्ष के लिए अपनी प्रियतमा से दूर रामगिरि पर निवास करना पड़ता है। आषाढ़ के प्रथम दिवस पर, यक्ष पर्वत की चोटी पर उमड़ते हुए मेघ को देखता है, और विरह से व्याकुल होकर उसे अपनी प्रियतमा तक संदेश पहुँचाने का निवेदन करता है। यह अनूठा विचार, एक निर्जीव बादल को दूत बनाना, काव्य की आधारशिला है, और इस प्रकार एक विस्तृत भौगोलिक यात्रा का मार्ग प्रशस्त करता है।

मेघदूतम् में कालिदास का विस्तृत भौगोलिक ज्ञान स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। उनके काव्यों में भारत के विभिन्न भौगोलिक प्रदेशों, पर्वतों, नदियों और वनों का उल्लेख मिलता है, जो उनके विस्तृत भौगोलिक ज्ञान का परिचायक है। विशेष रूप से मेघयात्रा विवरण प्रसंग में कवि ने रामगिरि से लेकर अलकापुरी तक पहुँचने के क्रम में जिन–जिन स्थलों का उल्लेख किया है, वे महत्वपूर्ण हैं। कवि ने सूक्ष्म से सूक्ष्म तथ्यों पर भी ध्यान दिया है, तथा मार्ग में पड़ने वाले विभिन्न पर्वत, नदी, नगर, वनादि का विस्तृत वर्णन किया है, जिससे तत्कालीन भारतवर्ष की प्राकृतिक छटा का एक अतीव हृदयावर्जक चित्र उभर कर सामने आता है। यह विवरण इस बात की पुष्टि करता है, कि कालिदास ने संभवतः सुदूर स्थानों की स्वयं यात्रा की थी अथवा पर्यटकों से विस्तृत विवरण प्राप्त किया होगा। आज के वैज्ञानिक युग में भी कालिदास का वर्णन पूर्णतया सत्य ज्ञात होता है, जो उनकी भौगोलिक ज्ञान की सटीकता को प्रमाणित करता है।

यह काव्य केवल एक साहित्यिक रचना नहीं, बल्कि प्राचीन भारत का एक ''विशद भौगोलिक दस्तावेज'' भी है। मेघदूतम् का मंदाक्रांता छंद, जो अपनी धीमी और प्रवाहमय गति के लिए जाना जाता है, जो कवि को विस्तृत कल्पना और भावनाओं को व्यक्त करने की अनुमति देता है। यह छंद कवि को भौगोलिक विवरणों को भी अत्यंत विस्तार और संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत करने में सक्षम बनाता है। इस प्रकार, काव्य का यह छंद न केवल भावनात्मक गहराई को बढ़ाता है, बल्कि भौगोलिक विवरणों को भी जीवंतता प्रदान करता है। कालिदास का अपने वर्णन में वास्तविक वातावरण का समावेश, मेघदूतम् को शास्त्रीय कविता में दुर्लभ स्थान की भावना प्रदान करता है। आधुनिक शोधकर्ताओं ने इस काव्य में वर्णित मेघ के मार्ग का विस्तृत मानचित्रण किया है, जिससे कालिदास की भौगोलिक सटीकता की पुष्टि होती है। ये अध्ययन इस विचार को पुष्ट करते हैं कि मेघदूतम् केवल भावनात्मक गहराई का काम नहीं है, बल्कि एक परिष्कृत भौगोलिक दस्तावेज भी है। मेघ की यात्रा रामगिरि से शुरू होकर उत्तर दिशा की ओर बढ़ती है, जिसमें वह विभिन्न भौगोलिक

और सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण स्थानों को पार करते हुए, अलकापुरी तक पहुँचता है। इस यात्रा में वर्णित प्रत्येक पड़ाव का विस्तृत विश्लेषण निम्नलिखित है –

यात्रा का प्रारम्भिक बिंदुः रामगिरि

कालिदास अपनी भौगोलिक यात्रा की शुरुआत रामगिरि की पहाड़ी से करते है। इस स्थल की वर्तमान स्थिति के बारे में विद्वानों में काफी मतभेद है, और अभी तक कोई निश्चित समाधान प्राप्त नही हुआ है। रामगिरि कि पहचान मुख्य रूप से दो स्थलों के रूप मे की गई है :

1. चित्रकूट

यह बुंदेलखंड क्षेत्र में स्थित है, जो 24° 48′ से 25° 12′ उत्तरी अक्षांश और 80° 58′ से 81° 34′ पूर्वी देशांतर के बीच स्थित है। हिंदू धर्म के अनुसार भगवान राम ने अपने वनवास का एक महत्वपूर्ण हिस्सा यहाँ पर व्यतीत किया था।

2. रामटेक

यह महाराष्ट्र के नागपुर शहर के पास स्थित है, जो 21° 39′ उत्तरी अक्षांश और 79° 32′ पूर्वी देशांतर पर स्थित है। इस स्थान के बारे मे भी यह मान्यता है, कि भगवान राम, सीता और लक्ष्मण ने अपने वनवास के दौरान यहाँ विश्राम किया था। पौराणिक मान्यताओं के अनुसार भगवान राम ने यही राक्षसों से इस क्षेत्र को मुक्त कराने की प्रतिज्ञा ली थी, जिससे इस स्थान का नाम रामटेक (राम की प्रतिज्ञा) पड़ा।[2]

कवि ने रामगिरि का विवरण इस प्रकार दिया है, कि यह जनक की पुत्री (सीता) के स्नान से पवित्र जल वाले तथा घने छायादार वृक्षों से युक्त है, तथा यह भगवान श्री रामचंद्र जी के चरणों द्वारा चिन्हित स्थल है।[3] इस प्रकार इस स्थल का सम्बंध राम और सीता से जोड़ देने से इसकी वर्तमान स्थिति के बारे में और समस्या उत्पन्न हो जाती है, क्योंकि यह विशेषता प्रमुखतया दोनों स्थलों पर पायी जाती है। इसलिए विद्वानों मे काफी मतभेद है, इस स्थल की पहचान को लेकर मल्लिनाथ[4] तथा वल्लभदेव रामगिरि की पहचान चित्रकूट पर्वत से करते है। आगे चलकर संस्कृत के लगभग सभी टीकाकारों ने इसी मत का अनुसरण किया है, लेकिन इस मत को मानने में जो सबसे बड़ी समस्या है, वह यह है, कि रामगिरि से उत्तर की ओर जाने के लिए जिन नदियों और नगरों जैसे नर्मदा, दशार्ण, वेत्रवती, उज्जयिनी आदि की आवश्यकता होती है, वे चित्रकूट के दक्षिण मे है, उत्तर में नही है। इसलिए चित्रकूट रामगिरि पर्वत नही हो सकता है। इस संदर्भ में दूसरा मत विल्सन महोदय का है, जिनका मानना है कि "नागपुर से 28 मील उत्तर आधुनिक रामटेक ही रामगिरि पर्वत है"। इस मत का समर्थन कुछ अन्य विद्वान जैसे "वी. वी. मिराशी"[5] "सूर्यनारायण व्यास" जैसे अन्य विद्वानों ने भी किया है। इनका मत हैं कि वाकाटकों के समय यह पहाड़ी रामगिरि के नाम से प्रसिद्ध थी, और वहाँ श्री रामचंद्र की चरण पादुका के रूप में पूजा की जाती थी। इस मत के समर्थन में प्रभावती गुप्ता के "रिद्धपुर ताम्रपत्र" का भी उद्धरण दिया जाता है, जिसमें उन्होने रामगिरि स्वामी की चरणपादुका की पूजा की थी, तथा दान दिया था।[6] इसके अलावा यहाँ पर सीता स्नान कुण्ड, राम की चरणपादुका, कुटज की पुष्पों की प्राचुर्यता इत्यादि यह सिद्ध करती हैं, कि रामटेक ही रामगिरि है। रामगिरि की पहचान में यह भिन्नता यह दर्शाती है, कि कालिदास ने सम्भवतः एक व्यापक सांस्कृतिक संदर्भ को समेटा था, न कि केवल एक कठोर भौगोलिक मार्ग को।

मेघदूतम् की यात्रा के प्रमुख पड़ाव

रामगिरि से अपनी यात्रा शुरू करते हुए, मेघ उत्तर दिशा की ओर बढ़ता है, और विभिन्न भौगोलिक और सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण स्थानों को पार करते हुए, अलकापुरी तक की यात्रा करता है, जो निम्नलिखित है – कवि रामगिरि से विदा लेने से पहले मेघ को यह निर्देश करते है, कि हे मेघ ! अपनी यात्रा के अनुकुल मार्ग को सुन लो ताकि तुम सही मार्ग का अनुसरण कर सको और शीघ्र ही अपनी गंतव्य को पहुँच सको। रास्ते में बार–बार थक जाने पर पर्वतों पर विश्राम कर लेना तथा बार–बार क्षीण होने पर नदियों के हल्के जल का उपभोग कर लेना इत्यादि वर्णित है।

माल क्षेत्र

रामगिरि से उत्तर कि ओर मुख वाले होकर मेघ "माल क्षेत्र" से होता हुआ आगे बढ़ता है। कवि इस स्थल के बारे में बताते है, कि रास्ते में कृषिगत कार्यो में लगी स्त्रियों के द्वारा देखे जाते हुए तुम तत्क्षण हल से जोते जाने के कारण सुगंधित माल क्षेत्र पर चढ़कर कुछ पश्चिम की ओर जाना, पुनः तेजी से उत्तर की ओर ही जाना। विभिन्न टीकाकारों ने माल का भिन्न–भिन्न अर्थ किया है। स्वयं "मल्लिनाथ" ने इसका अर्थ उँची पठारी भूमि किया है, जबकि प्रो. "विल्सन" छत्तीसगढ़ में रत्नपुर के पास माल्दा से इसका सम्बंध जोड़ते है। किंतु कुछ टीकाकारों ने माल का सम्बंध मालव प्रदेश से किया है। इस प्रसंग में मल्लिनाथ का मत ज्यादा तार्किक प्रतीत होता है, क्योंकि कवि ने स्वयं माल प्रदेश पर चढ़ने की बात की है, जो कोई उँचा स्थान रहा होगा। माल शब्द की व्याख्या कोषकार के अनुसार उँचा भूतल (मालंमुन्नत भूतलम्) है। और मालंदेशे वनेप्युक्तं माले ग्रामांतराटवी ।
मालं मालव देशेच वसते भूमि रूर्ध्वकः।।[7]
पं. सूर्यनारायण व्यास ने माल–क्षेत्र की स्थिति सतपुड़ा–अमरकण्टक के निकट का स्थान माना है।

अमरकंटक

रेवा (नर्मदा नदी का उद्‌गम स्थल): इसके अगले पड़ाव के रुप में कवि ने आम्रकूट पर्वत का उल्लेख किया है, जो आम के वृक्षों से आच्छादित है। विल्सन ने इसे अमरकंटक बतलाया हैं। यह मध्य प्रदेश के अनूपपुर जिले में स्थित एक महत्वपूर्ण तीर्थस्थल है, जिसे तीर्थराज के रूप में जाना जाता है। अमरकंटक विंध्य और सतपुड़ा पर्वतमालाओं का मिलन बिंदु है, जिसमे मैकल पहाड़ियाँ प्रमुख है। यह पवित्र नर्मदा, सोन और जोहिला नदियों का उद्‌गम स्थल है। यक्ष ने मेघ को यह कहा है कि उस पर्वत पर क्षण भर ठहर कर जल की वर्षा कर देना और आगे के मार्ग को पारकर विंध्याचल की तलहटी में फैली हुई रेवा (नर्मदा) नदी जो जामुनों के कुंज द्वारा रुके हुये वेग वाली हो गई है, उसके जल को लेकर अवश्य जाना। रेवा को वर्तमान में नर्मदा नदी के रूप में पहचाना गया है। अमरकोष में नर्मदा के चार नाम आये हैं जिनमें रेवा शब्द भी है –

रेवावु नर्मदा सोमोद्‌भवा मेकलकन्यका। (अ. प्र. का. वा.– 37)
यह भारत की सात पवित्र नदियो में से एक है, जिसकी महत्ता निम्न श्लोक से स्पष्ट होती है –

गंगे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती।
नर्मदे सिंधु कावेरि जलेस्मिन्सन्निधिं कुरु।।[8]

आगे यक्ष मेघ को समझाते हुए कहता है, कि जब तुम रेवा का जलग्रहण करके आगे बढ़ोगे तो सारङ्ग तुम्हारे मार्ग का निर्देशन करेंगे।

विदिशा – दशार्ण की राजधानी

रेवा के बाद दशार्ण प्रदेश का उल्लेख मिलता है, जिसके बारे में कुछ विद्वानों का मानना है, कि दशार्ण शब्द किसी नदी का वाचक है, जो विंध्य–पर्वत से निकलती है, तथा यहीं पर बहती है। जबकि कतिपय विद्वान् मध्यप्रदेश के छत्तीसगढ़ को ही दशार्ण मानते हैं। लेकिन कवि का अगला श्लोक "तेषां दिक्षु प्रथितविदिशालक्षणां राजधानी" का अध्ययन करने के बाद यह प्रतीत होता हैं, कि दशार्ण शब्द किसी नदी का सूचक न होकर एक प्रदेश का सूचक हैं, तथा उसके राजधानी के रूप में विदिशा नगर का उल्लेख किया हैं, जो चारों दिशाओ में विख्यात हैं। यह नगरी वेत्रवती (वेतवा) नदी से सुशोभित हैं, जिसका कवि ने मेघ को रसपान करने की बात की हैं। प्राचीन काल में विदिशा वेत्रवती नदी के तट पर स्थित एक प्रसिद्ध नगरी थी। यह दशार्ण देश की राजधानी थी। मालवा स्थित भिलसा को ही प्राचीन विदिशा का आधुनिक रूप माना जाता है, और इसका भौगोलिक निर्देशांक लगभग 23° 53′ उत्तरी अक्षांश से 77° 82′ पूर्वी देशांतर हैं।

वेत्रवती नदी

इस नदी की पहचान आधुनिक वेतवा नदी के रूप में की जाती हैं, जिसका उद्‌गम मध्य प्रदेश के रायसेन जिले में कुमरा गाँव के निकट झिरी नामक स्थान से होता है। यह विंध्य श्रेणी में स्थित है। वेतवा उत्तर–पूर्व दिशा में बहती हुई, लगभग 480 किलोमीटर का सफर तय करती है, और अंततः उत्तर प्रदेश के हमीरपुर के पास यमुना नदी में मिल जाती है।

आगे नीचैः नामक पर्वत का उल्लेख मिलता हैं, जहाँ पर कवि मेघ को विश्राम करने की बात करते हैं, तथा वन के नदियों के तट पर पुष्पों को चुनने वाली स्त्रियों को छाया देने की बात करते हैं। पं. सूर्यनारायन व्यास के अनुसार यह स्थान भिलसा के निकट ही रहा होगा।[9]

निर्विंध्या नदी

उज्जयिनी पहुँचने से पहले मेघ को निर्विंध्या नदी को पार करना है, जिसकी पहचान पार्वती नदी के रूप में की गई हैं। यह मध्यप्रदेश में विंध्य रेंज के उत्तरी ढ़लानों में काली सिंध नदी से निकलती हैं, और आगे चलकर राजस्थान राज्य के बारां, झालवाड़ और कोटा जिले से होकर अंततः चंबल नदी के दाहिने तट पर विलीन हो जाती हैं। इसी निर्विंध्या नदी को पारकर उज्जयिनी पहुँचने में मेघ का मार्ग टेढ़ा हो जाता हैं।

उज्जयिनी

शिप्रा नदी के तट परः सबसे विशेष हैं कवि का मेघ से उज्जयिनी पहुँचने के लिए विशेष आग्रह करना और यह कहना कि –

> वक्रः पंथा यदपि भवतः प्रस्थितस्योत्तराशां ।
> सौद्योत्सङ्गप्रणयविमुखो मा स्म भूरूज्जयिन्याः ।।
> (पूर्व मेघ. 28)

अर्थात् उत्तर दिशा में प्रस्थान करने वाले हे मेघ ! आपका मार्ग यद्यपि टेढ़ा होगा, तथापि उज्जयिनी के प्रासादों के उर्ध्व भागों का परिचय करने से विमुख मत होना। यह दर्शाता हैं, कि कवि का उज्जयिनी से विशेष अनुराग था।[10] उज्जयिनी का उल्लेख ''विशाला" के नाम से किया है, जिसकी वैभवशालिता के संदर्भ में कवि ने लगभग 16 श्लोक की रचना की हैं, तथा नगर की सुंदरता, वहाँ के बाजार, वीर सेनानी, महाकाल के मंदिर इत्यादि का वृहद् रूप से उल्लेख किया हैं। यह प्राचीन काल में अवंती राज्य की राजधानी थी और मालवा पठार का सबसे प्रमुख शहर था। इसके भौगोलिक निर्देशांक लगभग 23° 17′ उत्तरी अक्षांश से 75° 79′ पूर्वी देशांतर हैं।

शिप्रा नदी

उज्जयिनी शिप्रा नदी के पावन तट पर बसी हैं, जिसके बारे में कवि वर्णन करते हैं, कि शिप्रा नदी की वायु अत्यंत लाभकारी हैं। यह मध्य–प्रदेश में बहने वाली एक प्रसिद्ध और ऐतिहासिक नदी हैं, जो इंदौर के उज्जैनी मुंडला गांव की ककड़ी–बड़ली नामक स्थान से निकलती हैं तथा 196 कि.मी. बहने के बाद मंदसौर में चंबल नदी में मिल जाती हैं। उज्जैन में कुम्भ का मेला तथा महाकाल का मंदिर भी इसी नदी के तट पर हैं।

आगे यक्ष मेघ से कहता हैं, कि हे मेघ ! तुम उज्जयिनी के महाकाल मंदिर में संध्या कालीन पूजा में सम्मिलित होकर गर्जन करके पुण्य–फल प्राप्त करना। रात्रि में वही किसी छज्जे पर विश्राम करके सूर्योदय के साथ ही आगे बढ़ना। उज्जैन का महाकालेश्वर मंदिर भारत के बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक है, जिसका महत्व विभिन्न पुराणों में वर्णित है। कालिदास सहित कई संस्कृत कवियों ने इस मंदिर की महिमा का गुणगान किया है।

गम्भीरा नदी

उज्जैन को पार करते ही रास्ते में गम्भीरा नदी का जिक्र मिलता है। यह एक छोटी नदी हैं, जो मालवा में बहती हैं। इस नदी की पहचान "उटंगन नदी" के रूप में की गई हैं, जो राजस्थान के करौली जिले के अरावली पहाड़ियो से उत्पन्न होती हैं। आगे हिंडौन सिटी, भरतपुर, धौलपुर से होते हुए उत्तरप्रदेश के मैनपुरी जिले में प्रवेश करती हैं, और अंत में यमुना में इसका विलय हो जाता है।

देवगिरि

गंभीरा का रसास्वादन करने के बाद देवगिरि के तरफ जाने को इंगित किया गया हैं, जहाँ पर स्कंद का निवास स्थान बताया गया हैं। देवगिरि की पहचान आधुनिक डूंगरपुर के रूप में की गई हैं।[11]

चम्बल नदी

देवगिरि से बढ़कर रंतिदेव के कीर्तिशेष "चर्मण्यवति नदी" का उल्लेख हैं, जिसको वर्तमान में चम्बल नदी के रूप में जाना जाता हैं। इस नदी की उत्पत्ति के बारे में कवि बताते हैं कि –

> व्यालम्बेर्था सुरतभितनयालम्भजां मानयिष्य–
> न्स्त्रोतोमूत्या भुवि परिणतां रंतिदेवस्य कीर्तिम्।। (पूर्व मेघ. – 49)

यह नदी रंतिदेव के द्वारा किये गये अनेको यज्ञो में पशु–बलि के रक्त के प्रवाह से बह चली थी, जिसको चर्मण्यवती (चम्बल) के नाम से जाना जाता हैं। चम्बल मध्यप्रदेश के "जानापाव पर्वत" बांगचु प्वाइंट महू से निकलती हैं, तथा उत्तर–प्रदेश में बहते हुए लगभग 965 कि. मी. की दूरी तय करके यमुना नदी में मिल जाती हैं। इस यात्रा मे यह नदी मध्य प्रदेश, राजस्थान और उत्तर प्रदेश से होकर बहती है, और इन राज्यों के बीच सीमा भी बनाती है।

दशपुर

चर्मण्यवती के विलासिता से परिचित होते हुए मेघ को दशपुर जाने को निर्दिष्ट किया गया हैं। दशपुर की स्थिति के विषय में विद्वानो में मतभेद हैं। यह रंतिदेव की राजधानी थी। कुछ लोगों का विचार हैं, कि आधुनिक मंदसौर अथवा दसौर ही दशपुर हैं। आप्टे के अनुसार आधुनिक धौलपुर ही दशपुर हैं।

ब्रह्मावर्त जनपद और कुरुक्षेत्र

इसके बाद ब्रह्मावर्त जनपद में प्रवेश करते हुए, क्षत्रियों के युद्ध सूचक कुरूक्षेत्र में जाने की बात की गई हैं, जहाँ गाण्डीव धारी अर्जुन ने सैकडो बाण चलाये थे। मनुस्मृति में ब्रह्मावर्त क्षेत्र का निर्धारण सरस्वती और दृषद्वती इन दो देव नदियों के मध्य में किया गया हैं।

सरस्वती दृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदंतरम् ।
तं देवनिर्मितं देशं ब्रह्मावर्तं प्रचक्षते ।। (मनु. 2. 17)[12]

ऐसी प्रसिद्धि हैं कि ब्रह्मा ने इस देश में बैठकर सृष्टि की रचना की थी। इसलिए इसे ब्रह्मावर्त कहा गया हैं।

गंगा नदी और हिमालयी क्षेत्र (कनखल, हरिद्वार, गंगोत्री)

आगे के मार्ग को निर्दिष्ट करते हुए यक्ष मेघ को कुरूक्षेत्र से कनखल जाने को कहता हैं, तथा बताता हैं, कि कनखल के पास पर्वतराज हिमालय से उतरी हुई तथा सगर के पुत्रों के लिए स्वर्ग की सीढ़ी के समान जह्नु की पुत्री गंगा के पास जाना। हिमालय से सर्वप्रथम गंगा जी कनखल के पास नीचे उतरती हैं। गंगा नदी गंगोत्री ग्लेशियर, उत्तराखंड से निकलती है, जिसका उद्‌गम निर्देशांक लगभग 30° 59′ उत्तरी अक्षांश तथा 78° 55′ पूर्वी देशांतर है। यह भारत की सबसे महत्वपूर्ण नदियों में से एक है, जो उत्तरी और पूर्वी भारत से होकर बांग्लादेश में बहती है, जहाँ यह बंगाल की खाड़ी में गिरती है। इसलिए कनखल को अतिपावन तीर्थ कहा जाता हैं। कनखल के विषय में भी लोक–प्रसिद्धि हैं कि यहाँ पर जो नर–नारी स्नान करते हैं, उनका पुनर्जन्म नही होता हैं। वे जन्म–मृत्यु के चक्र से मुक्त हो जाते हैं –

हरिद्वारे कुशावर्ते विल्वके नीलपर्वते।
स्नात्वा कनखले तीर्थे पुनर्जन्म न विद्यते।।

हिमालय

कनखल के बाद कस्तूरी के गंध से सुगंधित शिलाओं वाले बर्फ से श्वेत हिमालय पर्वत का वर्णन है, जहाँ मेघ शिव के श्वेत बैल के समान शोभा धारण करेगा। आगे मेघ को निर्दिष्ट किया गया है, कि वहाँ शिला में प्रकट सिद्धों के द्वारा निरंतर उपहार भेंट किये गये भगवान शिव के चरण–चिन्ह की भक्ति से विनम्र होकर प्रदक्षिणा करना। शिवजी के चरण–चिन्ह से अलंकृत इस स्थान को शम्भूरहस्य नामक ग्रंथ में श्रीचरणन्यास कहा गया हैं। विल्सन का कहना हैं, कि यह स्थान हरिद्वार के पास किसी पहाड़ी पर रहा होगा। यहीं कारण हैं कि वहाँ "हर की पैड़ी" स्थान हैं। किंतु चमरी गायों, बर्फीले स्थानों तथा देवदार के वृक्षों के वर्णनों से ऐसा प्रतीत होता हैं, कि यह स्थान हरिद्वार से कही आगे होना चाहिए।

क्रौंच पर्वत

इसके आगे क्रौंच पर्वत का उल्लेख मिलता हैं, जिसके बारे में कवि बताते हैं कि –

प्रालेयाद्रेरुपतटमतिक्रम्य तांस्तांविशेषान्।
हंसद्वारं भृगुपतियशोवर्त्म यत्क्रौंचरंध्रम्।। (पूर्वमेघ. – 61)

अर्थात् हिमालय पर्वत के तट के समीप उन–उन विशेषों को लांघ कर जो, हंसो का मार्ग तथा परशुराम के यश का मार्ग, क्रौंच पर्वत का छिद्र हैं, उससे होते हुए उत्तर दिशा की ओर जाना। ऐसी मान्यता हैं, कि परशुराम जी ने बाण मारकर क्रौंच पर्वत में छिद्र कर दिया था। इसी पर्वत से हंस मानसरोवर जाया करते हैं। वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार यह स्थल सम्भवतः लिपूलेख दर्रा था, जो इस समय भी कैलाश आने–जाने का प्रधान मार्ग है।[13]

कैलाश पर्वत और मानसरोवर झीलः कैलाश पर्वत को मेघदूतम् में एक महत्वपूर्ण पड़ाव के रूप में वर्णित किया गया है, जहाँ मेघ को अतिथि के रूप में जाने को कहा गया है। यह पर्वत पौराणिक रूप से भगवान शिव का निवास स्थान माना जाता है, और ग्रंथ में शिव के चरण–चिन्हों का भी उल्लेख है।

मेघदूतम् में मानसरोवर झील का भी उल्लेख है, जिसे सुनहले कमलों को उत्पन्न करने वाला बताया गया है। मेघ को मानसरोवर के जल को ग्रहण करते हुए, ऐरावत को क्षण भर के लिए मुख पर वस्त्र का आनंद देते हुए, और कल्पवृक्षों के किसलयों को सूक्ष्म वस्त्र के समान हवाओं के द्वारा हिलाते हुए, क्रीड़ाओं के द्वारा उस पर्वतराज (कैलाश) का इच्छानुसार उपभोग करने को कहा गया है।

यात्रा का अंतिम गंतव्य– अलकापुरीः मेघदूतम् के अंतिम पड़ाव के रूप में अलका नगरी का वर्णन किया गया है। जहाँ पर यक्ष की प्रेयशी का निवास स्थान बताया गया है। कवि अलका नगरी की सुंदरता का वर्णन करते हुए बताते हैं, कि हे मेघ ! प्रेमी के समान उस कैलाश पर्वत की गोद में खिसके हुए गंगारूपी रेशमी–वस्त्र वाली अलका को देखकर तुम उसे सहज ही जान सकोगे। उंचे सात मंजिल भवनों वाली अलका तुम्हे देखकर ठीक उसी प्रकार धारण करेगी, जिस प्रकार कोई मेघ रमणी मोतियों के समूह से गूंथे हुए केशों को धारण करती हैं। यह नगरी यक्षों के राजा और धन के देवता कुबेर का घर है। महाभारत में इसे यक्ष साम्राज्य की राजधानी बताया गया है, और इसकी वास्तुकला, ऐश्वर्य और भव्यता में इंद्र की राजधानी अमरावती को टक्कर देने वाला वर्णित किया गया है। कुबेर ने लंका खोने के बाद कैलाश के पास इसे अपनी नई राजधानी के रूप में स्थापित किया था। जिस प्रकार अलकानगरी का विवरण दिया गया है, उससे पं. सूर्यनारायण व्यास ने यह निष्कर्ष निकाला है, कि यह स्थल सम्भवतः हिम–पर्वत मालिका के निकटवर्ती प्रदेश मे ही रहा होगा।[14]

निष्कर्ष

'मेघदूतम्' न केवल एक काव्य कृति के रूप में, बल्कि प्राचीन भारत के एक ''विशद भौगोलिक दस्तावेज'' के रूप में भी प्रशंसनीय है। कालिदास का विस्तृत विवरण उस समय के भारत की वनस्पतियों, जीवों, जलवायु और स्थलाकृति की उनकी गहरी समझ को दर्शाता है। यह खंडकाव्य मानवीकरण के माध्यम से प्रकृति और मानवीय भावनाओं के बीच एक गहरा संबंध स्थापित करता है, जिससे एक पारिस्थितिकिय दृष्टिकोण प्रस्तुत होता है, जो मानव और प्रकृति के बीच अंर्तसंबंध को उद्‌घाटित करता है। 'मेघदूतम्' के भौगोलिक आयामों का अध्ययन हमें न केवल प्राचीन भारत के भूभाग की जानकारी देता है, बल्कि यह भी बताता है, कि उस समय के लोग प्रकृति को कैसे देखते थे, उसका सम्मान कैसे करते थे, और उसे अपने जीवन का अभिन्न अंग मानते थे। आधुनिक युग में जब पर्यावरण और प्रकृति के साथ मानव के संबंध पर विचार–विमर्श चल रहा है, वहीं इस सम्बन्ध में 'मेघदूतम्' एक सशक्त भौगोलिक उदाहरण प्रस्तुत करता है, जहाँ प्रकृति को न केवल पृष्ठभूमि के रूप में, बल्कि एक सक्रिय पात्र और भावनात्मक प्रतिध्वनि के स्रोत के रूप में देखा जाता है। यह काव्य की प्रासंगिकता को बढ़ाता है, और हमें प्राचीन भारतीय सोच की गहराई को समझने में मदद करता है।

संदर्भ

1. व्यास सूर्यनारायण, विश्व कवि कालिदास एक अध्ययन, ज्ञान मण्डल प्रकाशन ग्वालियर–इंदौर, 1957, पृ. 1–2

2. जाधव भा. वि., सरदेशाई स्मारक ग्रंथ, डिजिटल लाइब्रेरी आफ इण्डिया, 1938, पृ. 115–17
3. महाकवि कालिदास, मेघदुतम्, सम्पा.–मल्लिनाथ, संजीवनीटीकया समेतम्, निर्णय सागर मुद्रणयंत्रालय, मुम्बई, 1922, पृ. 1–2
4. वही, पृ. 13–14
5. दिक्षित कै. रायबहादुर व मिराशी विष्णुदेव विष्णु, संशोधन मुक्तावलि, विदर्भ संशोधन मंडल, 1979, पृ. 63
6. वाजपेयी, के0 डी0, ऐतिहासिक भारतीय अभिलेख, स्किम पब्लिकेशन जयपुर, 2018, पृ. 203
7. व्यास सूर्यनारायण, पूर्वोक्त, पृ. 72
8. सान्याल, संजीव, लैंड ऑफ द सेवन रिवर्स : ए ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ इंडियाज ज्योग्राफी, वाइकिंग पेंगुइन, 2012
9. उपाध्याय, भगवतशरण, भारत की नदियों की कहानी, राजपाल एंड संस द्वारा प्रकाशित, 2014
10. व्यास सूर्यनारायण, पूर्वोक्त, पृ. 6
11. वही, पृ. 72
12. मनु, मनुस्मृति, टीका. पाठक श्री गणेशदत्त, ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार कचौडीगली वाराणसी, 2002, पृ. 53
13. अग्रवाल, वासुदेवशरण, कालिदासकृत मेघदूत एक अध्ययन, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1971, पृ. 223
14. व्यास सूर्यनारायण, पूर्वोक्त, पृ. 79